इस्लाम

और उसका पैग़ाम

मौलाना सैयद जलालुद्दीन उमरी

अनुवाद

मुहम्मद आबिद हामिदी

'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

अल्लाह के नाम से जो निहायत मेहरबान और रहम करनेवाला है।

भूमिका

13 नवम्बर सन् 1979 ई॰ को जमाअते-इस्लामी हिन्द हल्क़ा उत्तर-प्रदेश की जनसभा कानपुर में मैंने 'इस्लाम और उसकी दावत' के उनवान (शीर्षक) से एक लेख पढ़ा, जिसे इस्लामी दावत के दृष्टिकोण से बहुत फ़ायदेमन्द समझा गया। इसी फ़ायदे के पेशेनज़र यह लेख छोटी किताब की सूरत में भी प्रकाशित हुआ। इस बार मैंने फिर से इसे पढ़कर इसमें कहीं-कहीं शाब्दिक परिवर्तन के साथ दावत से सम्बन्धित इसकी बहस में कुछ बातों की बढ़ोत्तरी कर दी है। इसकी तरतीब को भी बेहतर बनाने की कोशिश की है और नाम भी बदल दिया है। अब इसका नाम है– "इस्लाम और उसका पैग़ाम"। इसमें पहले इस्लाम का संक्षिप्त परिचय है। इसके बाद दावत के कुछ पहलुओं को स्पष्ट किया गया है, अन्त में दावत के लिए जो ख़ूबियाँ हैं उनमें से कुछ महत्वपूर्ण ख़ूबियों का वर्णन है। इस प्रकार इस पुस्तिका में दावत के विभिन्न पहलुओं को समेटने और उसे व्यापक बनाने की कोशिश की गई है। दावती उद्देश्यों के लिए कभी-कभी छोटी-छोटी किताबों की ज़रूरत महसूस होती है। उम्मीद है कि यह पुस्तिका इस ज़रूरत को किसी हद तक पूरा करेगी। जो लोग इस विषय पर अधिक विस्तार चाहते हों वे मेरी किताब "इस्लाम की दावत" का अध्ययन कर सकते हैं। यह किताब बहुत पहले प्रकाशित हो चुकी है।

अल्लाह से दुआ है कि इस कोशिश को क़बूल करे और वह उद्देश्य बेहतर तरीक़े से पूरा हो जिसके लिए यह कोशिश की गई है।

सैयद जलालुद्दीन उमरी

28 अगस्त सन् 1985 ई॰

विषय-सूची

इस्लाम का परिचय

अल्लाह तआला ने अपने दीन (जीवन-व्यवस्था) को अवतरित कर के सदैव के लिए इनसान की क़िसमत का फ़ैसला कर दिया है। उसने उसके सामने सिर्फ़ दो रास्ते रखे हैं। एक यह कि वह इस दीन को क़बूल करके दुनिया और परलोक की कामयाबी हासिल कर ले। दूसरे यह कि इस दीन को अस्वीकार करके हमेशा-हमेशा की उस नाकामी और असफलता का सामना करे जिसके बाद फिर कभी सफलता नसीब न होगी।

इनसान की सफलता अल्लाह के दीन से जुड़ी है

भूतकाल में भी इनसान की सफलता अल्लाह के इसी दीन से जुड़ी थी, वर्तमान में भी इसी से जुड़ी है और भविष्य में भी इसी दीन से जुड़ी रहेगी। इनसान जबसे इस पृथ्वी पर आबाद है इस नियम में न कोई परिवर्तन आया है और न आएगा। पहले भी जब उसने अल्लाह के दीन से बग़ावत की, असफल और नामुराद रहा। अब भी इसी कारण वह असफल है। उसे अपनी आर्थिक उन्नति और प्राप्त संसाधनों पर घमण्ड है और इस बात की कोई ज़रूरत नहीं समझता कि उसका ख़ुदा उसे दीन सिखाए और मार्ग दिखाए। यह कोई नई बात नहीं है। दुनिया की बहुत-सी क़ौमों को अपनी उन्नति और ख़ुशहाली पर घमण्ड रहा है। लेकिन यह उनकी नादानी थी और अब यह इसकी नादानी है। जो व्यक्ति ख़ुदा की हिदायत से वंचित है वह भ्रष्ट मार्ग पर है। वह एक भयानक परिणाम की ओर बढ़ रहा है। अपने सारे उपलब्ध संसाधनों के बावजूद उसे तबाही से कोई चीज़ बचा नहीं सकती। इनसान की जीवन-नौका अल्लाह तआला के दीन की रहनुमाई ही में इच्छित तट

तक पहुँच सकती है। जहाँ यह रहनुमाई नहीं उस जीवन-नौका का डूब जाना यक़ीनी है।

अल्लाह का दीन इस्लाम है

अल्लाह का यह दीन हमेशा एक रहा है। यही इस्लाम है जो उसने हर ज़माने के उन महात्मा लोगों पर अवतरित किया जिन्हें रसूल और पैग़म्बर कहा जाता है। यही दीन अन्तिम बार अल्लाह के नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) पर अवतरित हुआ। इसे ज्यों का त्यों सुरक्षित कर दिया गया और क़ियामत तक के लिए रिसालत (ईश-दूतत्त्व) और पैग़म्बरी का सिलसिला ख़त्म कर दिया गया।

इस्लाम क्या है?

यह दीन एक फ़िक्र भी है और अमल भी, आस्था भी है और इबादत भी, अख़लाक भी है और क़ानून भी। यह अल्लाह से इनसान का सम्बन्ध भी जोड़ता है और इनसानों के एक-दूसरे से सम्बन्धों को दुरुस्त भी करता है। यह व्यक्ति का सुधार भी करता है और समाज का निर्माण भी। यह पवित्रता एवं शुद्धता भी है और अनथक कोशिक एवं जिहाद भी। इसमें आत्म-शान्ति भी है और आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी। यह इनसान के स्वभाव तथा भावनाओं और विचारों की भी निगरानी करता है और उसके मामलों को भी देखता है। यह उसकी आत्मा को ख़ुदा के सामने झुकाता है और शरीर को उसके आदेशों का पाबन्द बनाता है। यह दीन औरत के लिए भी है और मर्द के लिए भी। जवान के लिए भी है और बूढ़े के लिए भी, यह हाकिम के लिए भी है और प्रजा के लिए भी। अमीर के लिए भी है और ग़रीब के लिए भी। यह हर एक के अधिकार भी बताता है और कर्तव्य भी। यह व्यक्ति और समाज पर ख़ुदा की हुकूमत क़ायम करता है। इसकी हुकूमत ज़ाहिर (खुले) पर भी होती है और बातिन (छिपे) पर भी। यह

व्यक्ति को पवित्र जीवन और क़ौमों को बुलन्दी और उन्नति प्रदान करता है। यह पाक ख़ुदा का दीन है। इसमें दुनिया की कामयाबी भी है और परलोक की कामयाबी भी।

> "ऐ हमारे रब! हमें दुनिया में भी भलाई प्रदान कर और परलोक में भी भलाई प्रदान कर। और हमें जहन्नम (नर्क) के अज़ाब से सुरक्षित रख।" (क़ुरआन, 2 : 201)

इस्लाम की आस्थाएँ

हर व्यवस्था की कुछ वैचारिक बुनियादें होती हैं। इन्हीं पर उसकी पूरी इमारत खड़ी होती है। इन बुनियादों को ढा दिया जाए तो यह इमारत मल्बे के ढेर में तब्दील हो जाती है। इस्लाम की आस्थाओं से उसके वैचारिक आधार का निर्माण होता है। इन्हीं से उसके समस्त विवरण सामने आते हैं और एक व्यापक जीवन-व्यवस्था वुजूद में आती है। इन आस्थाओं के बिना ये विवरण अपने लाभ बिल्कुल ही खो देते हैं और इस व्यवस्था की हैसियत एक बेजान ढाँचे की होकर रह जाती है।

इस्लाम की आस्थाएँ हमारी इस भौतिक दुनिया से बाहर की कुछ हक़ीक़तों को मानने का नाम है। लेकिन इनके प्रभाव और परिणाम इसी भौतिक, आत्मिक और प्राकृतिक और नफ़्सियाती दुनिया में ज़ाहिर होते हैं। ये अक़ीदे (आस्थाएँ) इनसान की हैरानी और परेशानी का सबसे सही जवाब देती हैं कि यह कायनात (संसार) क्या है? वह कौन है? कहाँ से आया है? उसे कहाँ जाना है? उसके लिए सही रास्ता क्या है? उसकी मंज़िल क्या है? उसका अंजाम क्या होनेवाला है? इन आस्थाओं को मानकर वह यह तय करता है कि यह दुनिया सिर्फ़ एक ख़ुदा की है। इनसान उसका बन्दा है। उसी ख़ुदा ने अपने रसूलों के ज़रीए से उसकी हिदायत और रहनुमाई की है। इस हिदायत के ज़रीए से इसे दुनिया में पवित्र जीवन और परलोक में सफलता और हमेशा की कामयाबी मिल सकती है। इस जवाब से इसकी हैरानी दूर हो जाती

और इसका दुख और घबराहट ख़त्म हो जाता है। इसे वह चीज़ मिल जाती है जिसके बग़ैर दुनिया सुकून और चैन से वंचित है और अँधेरे में भटक रही है।

ये आस्थाएँ (अक़ीदे) इनसान के समस्त जीवन को एक विशेष दिशा प्रदान करती हैं। वे इसे एक ख़ुदा का बन्दा और दुनिया का बहुत ही ज़िम्मेदार इनसान बनाती हैं। वे इसे कुफ़्र व शिर्क (बहुदेववाद) से, नास्तिकता से, बिदअतों और ख़ुराफ़ातों से और तमाम झूठे विचारों और दृष्टिकोणों से सुरक्षित रखती हैं। इस्लाम शरीअत और क़ानून का एक मुकम्मल निज़ाम रखता है। उसमें जीवन के हर पहलू से सम्बन्धित हिदायत और रहनुमाई है। इन आस्थाओं को मानने के बाद वह ख़ुद-ब-ख़ुद इस पूरे निज़ाम (व्यवस्था) को क़बूल कर लेता और इसका पाबन्द हो जाता है। उनको माने बग़ैर यह निज़ाम न तो इसके लिए स्वीकार योग्य हो सकता है और न इसपर वह यकसूई (एकाग्रता) के साथ अमल कर सकता है। जिस व्यक्ति को ख़ुदा पर पूरा यक़ीन है उसी के लिए यह संभव है कि दूसरों की ख़ुदाई से इनकार करे। जिसे हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की रिसालत (ईशदूतत्त्व) पर ईमान हो वही दिल से आपकी पैरवी भी कर सकता है और उसपर साबित क़दम भी रह सकता है, जिसे आख़िरत के अज्र व सवाब का यक़ीन हो उसी के अन्दर यह हिम्मत होगी कि दीन की ख़ातिर दुनिया के लाभों को क़ुरबान कर दे। इतिहास गवाह है कि इन आस्थाओं को स्वीकार किए बग़ैर किसी ने उसकी वैधानिक व्यवस्था को कभी नहीं अपनाया।

मसला सिर्फ़ इस दुनिया का नहीं, आख़िरत का भी है। आख़िरत की नजात का दारोमदार उन्हीं आस्थाओं पर है। जो व्यक्ति ख़ुदा, रसूल और आख़िरत को दिल से माने वही वहाँ कामयाब होगा। जो इन हक़ीक़तों से इनकार करे उसे ख़ुदा के अज़ाब से कोई चीज़ बचा न सकेगी।

इस्लाम की इबादतें (उपासनाएँ)

आस्थाओं के बाद इस्लाम में इबादतों का स्थान है। नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात, ज़िक्र, दुआ और तौबा (क्षमायाचना) वग़ैरा उसी की विभिन्न शक्लें हैं। अल्लाह से इनसान का सम्बन्ध किसी एक पहलू से नहीं बल्कि बहुत-से पहुलओं से है। इबादतों से उसके सम्बन्ध के इन्हीं पहलुओं का इज़हार होता है। नमाज़ सरापा विनम्रता और समर्पण है। इसके द्वारा इनसान बन्दगी की मुकम्मल तस्वीर बन जाता है। और ख़ुद को अल्लाह के सामने झुकाकर उसकी ख़ुदाई का एतिराफ़ करता है। ज़कात इस बात की अलामत है कि बन्दा अल्लाह के हुक्म पर अपना माल ख़र्च कर सकता है। नमाज़ में तन-मन और जान ख़ुदा के हवाले होते हैं और ज़कात में वह अना माल उसकी भेंट चढ़ाता है। नमाज़ और ज़कात इस बात का सुबूत है कि इनसान को अल्लाह से भी मुहब्बत है और उसके बन्दों से भी वह हमदर्दी रखता है। रोज़ा ख़ुदा का ख़ौफ़ और परहेज़गारी पैदा करता है और सब्र और स्थायित्व की शिक्षा देता है। हज अल्लाह की राह में घर-बार छोड़ने, दौड़-धूप करने और अपनी प्रिय चीज़ों को क़ुरबान करने का नाम है। इस तरह से इबादतें विभिन्न पहलुओं से उस सम्बन्ध को ज़ाहिर करती हैं जो ख़ुदा और बन्दे के बीच है और होना भी चाहिए।

ये इबादतें ठीक-ठीक तरीक़े से की जाएँ तो इनसे परहेज़गारी, इनाबत (रुजूअ), डर, विनम्रता और ख़ुलूस जैसी ख़ूबियाँ पैदा होती हैं और इनसान का पूरा वुजूद अल्लाह के सामने झुक जाता है। इसके सारे कर्म उसी के हो जाते हैं। वह सबसे ज़्यादा उससे डरनेवाला और सबसे ज़्यादा उससे मुहब्बत करनेवाला बन जाता है। वह उसकी इबादत और इताअत (आदेशनुपालन) में लज़्ज़त महसूस करने लगता है। और उसकी गुनाहगारी और नाफ़रमानी उसके लिए कष्टदायक हो जाती है। उसके अन्दर अनथक कोशिश और जिहाद की रूह पैदा हो जाती है, अप्रिय

परिस्थितियों में साबित क़दम रहने का हौसला उभर आता है। इनसानों की ख़िदमत, समानता और हमदर्दी की स्प्रिट जाग उठती है और उसका पूरा जीवन अल्लाह के लिए हो जाता है। इस प्रकार उसका हर कर्म (अमल) पूरी तरह इबादत बन जाता है और वह यकायक पुकार उठता है :—

"बेशक मेरी नमाज़, मेरी क़ुरबानी, मेरा जीना और मेरा मरना, सब सारे जहान के रब अल्लाह के लिए है।" (क़ुरआन, 6:162)

इस्लाम के अख़लाक़ (नैतिकता)

आस्थाओं और उपासनाओं के बाद इस्लाम ने सबसे ज़्यादा ज़ोर अख़लाक़ अर्थात नैतिकता पर दिया है। नैतिकता से मानव-सम्बन्धों में अच्छे गुण, ख़ूबी और कमाल पैदा होता है और एक व्यक्ति का वुजूद दूसरे व्यक्ति के लिए फ़ायदेमन्द और शान्तिदायक होता है।

नैतिकता इनसान के चरित्र का बेहतरीन पैमाना है। इससे मालूम होता है कि उसपर ज़िन्दगी के मामलों में किस हद तक विश्वास किया जा सकता है? उसे दूसरों से कितनी मुहब्बत है? वह इनके लिए क्या क़ुरबानी दे सकता है? उनके दुख-दर्द का उसे किस हद तक एहसास है और वह इनके क्या काम आ सकता है? अख़लाक के बग़ैर इनसान या तो संवेदनाओं से ख़ाली एक बेजान मशीन बनकर रह जाता है या एक ख़तरनाक दरिन्दा।

क़ुरआन मजीद ने जहाँ कहीं ईमानवालों के विशेष गुण बयान किए हैं वहाँ उनके चारित्रिक गुणों को बहुत नुमायाँ किया है। वह उच्च चरित्र के बग़ैर किसी मोमिन (आस्थावान) की कल्पना नहीं करता। वह ईमानवालों के बारे में कहता है कि वे इनसानों के शुभचिन्तक और हमदर्द होते हैं, वे अपने आप पर दूसरों को तरजीह (प्राथमिकता) देते हैं, वे सत्यवादी, सच्चे, दियानतदार और अमानतदार होते हैं। वे वादे के पाबन्द होते हैं, वे व्यभिचार और बदकारी से दूर रहते हैं और सतीत्व

(इस्मत) की रक्षा करते हैं। वे माफ़ी और दरगुज़र से काम लेते हैं, उनमें घमण्ड नहीं होता, मेहमान-नवाज़ी और ख़ाकसारी उनका धर्म है, वे नर्म और शील स्वभाव के होते हैं, जिहालत और बरबरियत का प्रदर्शन नहीं करते। वे धन-दौलत को अमानत समझते हैं, न तो उनमें बख़ीली और कंजूसी होती है और न वे ग़लत कामों में धन-दौलत ख़र्च करते हैं। वे हक़दारों के हक़ों को पहचानते हैं, ज़ुल्म, अत्याचार से उनका दामन पाक होता है। वे नाहक़ किसी का ख़ून नहीं बहाते, किसी का माल नहीं खाते और किसी पर अन्यायपूर्ण हाथ नहीं उठाते। वे अल्लाह के बन्दे हैं, अल्लाह के किसी बन्दे को उनसे कभी कोई कष्ट नहीं पहुँचता।

फिर यह कि ये नैतिक मूल्य उसके निकट न तो बदलते हैं और न वक़्ती क़द्रो-क़ीमत रखते हैं, बल्कि वे हमेशा रहनेवाली और स्थाई क़द्रो-क़ीमत रखते हैं। सच्चाई और रास्तबाज़ी का मामला हर एक के साथ होना चाहिए और हमेशा होना चाहिए। धोखा-धड़ी और ख़ियानत जिस तरह अपनों के साथ अनुचित है उसी तरह दूसरों के साथ भी अनुचित है। दियानत और अमानत की पाबन्दी हर हाल में करनी होगी। अहदो-पैमान (वचनबद्धता) जिससे भी किया जाए उसे पूरा करना लाज़मी है। इस्मत और सतीत्व की अहमियत वक़्ती नहीं बल्कि हमेशा की और स्थाई है। व्यभिचार (ज़िना) और बदकारी किसी भी सूरत में जाइज़ नहीं हैं।

इस तरह इस्लाम ने मौलिक नैतिक चरित्र की स्पष्ट धारणा दी। बुराइयों और ख़ूबियों दोनों को विस्तार से बयान क्रिया। बुराइयों से हमेशा के लिए मना किया और ख़ूबियों का मुस्तक़िल (स्थायी) पाबन्द बनाया।

इसके साथ उसके निकट ईमानवाले सत्य के ध्वजावाहक होते हैं। उनके ज़रीए यहाँ अद्ल और इनसाफ़ क़ायम होता है। यह महान कार्य जिन उच्च नैतिक ख़ूबियों का तक़ाज़ा करता है उनके जीवन इनसे भी

सुसज्जित होते हैं। वे सत्य के साथी और असत्य के दुश्मन होते हैं। वे जल्दबाज़ और क्षणिक स्वभाववाले नहीं होते। वे परेशानियों का धैर्य के साथ सामना करते हैं। उनमें यक़ीन और भरोसा पाया जाता है। वे दृढ़ संकल्प के पर्वत होते हैं, उनको तोड़ा तो जा सकता है लेकिन अपनी जगह से हटाया नहीं जा सकता, वे साहस और वीरता में ढले होते हैं। एक अल्लाह के सिवा किसी का डर उनके दिलों में जगह नहीं पाता। वे अपने मक़सद के लिए जान की बाज़ी लगा सकते हैं, माल लुटा सकते हैं, नाते-रिश्तेदार और क़रीबी लोगों की क़ुरबानी दे सकते हैं। हक़ बात उन्हें फाँसी के फन्दे पर भी कहना आता है, उन्हें किसी क़ीमत पर ख़रीदा नहीं जा सकता, वे अल्लाह के दीन के लिए जीते और मरते हैं, उनकी दोस्ती और दुश्मनी सब कुछ अल्लाह ही के लिए होती है।

इस्लाम के मामलात

इस्लाम ने नैतिकता की शिक्षा के साथ इनसानी मामलात की भी बेहतरीन व्यवस्था की है और इसके लिए व्यापक निर्देश और नियम दिए हैं। इस्लाम की धारणा यह है कि इबादतों ही को नहीं ज़िन्दगी के तमाम मामलों को ख़ुदा के दीन के अधीन होना चाहिए। इनसान ख़ुदा का बन्दा है। उसे यह अधिकार नहीं है कि ख़ुदा की हिदायत से बेपरवाह होकर अपने मामलों को ख़ुद से हल करे और इनके लिए क़ानून बनाए। जब वह इस प्रकार का क़दम उठाता है तो अपनी सीमाओं का उल्लंघन करता है और बड़े ज़ुल्म का काम करता है। परलोक में भी इसका उसे जवाब देना होगा और दुनिया में भी इसका अंजाम अच्छा नहीं होगा। अतः जब उसने कभी अपने आपको ख़ुदाई के स्थान पर विराजमान समझकर अपने मामलात को हल करना चाहा, विषम परिस्थितियों में ग्रस्त हो गया और हक़ और इनसाफ़ का दामन छोड़ बैठा। कभी किसी व्यक्ति पर अत्याचार हुआ, कभी किसी जमाअत

पर, कभी एक सम्प्रदाय ने शोषण किया और कभी दूसरे सम्प्रदाय ने। अपने मामलात को ख़ुदा के दीन से अलग करने के बाद इस अंजाम का प्रकट होना ज़रूरी है। इससे न तो वह अब तक बच सका और न आगे भविष्य में बच सकता है।

इस्लाम हमारी राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था को ख़ुदा की इच्छा के अधीन बनाता है और ख़ानदान से लेकर हुकूमत और राज्य तक हर विभाग को अद्ल और इनसाफ़ की बुनियाद पर चलाता है। यह एक ऐसा बेलाग क़ानून होता है जो राजा और रंक के बीच कोई फ़र्क़ नहीं करता। वह मज़लूम को उसका पूरा-पूरा हक़ दिलवाता है और अत्याचारी को उसके अत्याचार की भरपूर सज़ा देता है। वह ऐसे नियम बनाता है कि कमज़ोर-से-कमज़ोर इनसान भी अपने आपको सुरक्षित समझे और ताक़तवर को ज़ुल्म करते हुए हज़ार बार सोचना पड़े। इस्लाम एक न्यायिक व्यवस्था का ध्वजावाहक है और इसी को इस दुनिया में स्थापित करना चाहता है।

यह इस्लाम का एक संक्षिप्त परिचय है। इस्लाम एक दावती दीन है जो अपने माननेवालों से प्रचार-प्रसार का और उसे दुनिया के एक-एक इनसान तक पहुँचाने का मुतालबा करता है। आगे के पृष्ठों में इसे कुछ विस्तार पेश किया जाएगा।

इस्लाम की दावत

इस्लाम एक दावत (आमन्त्रण) है, एक आन्दोलन और क्रान्ति है। दुनिया में भौतिक आन्दोलन भी उठते है और नैतिक आन्दोलन भी। भौतिक आन्दोलन इनसान की भौतिक समस्याओं से बहस करते हैं और आत्मिक आन्दोलन आत्मा का सुधार चाहते हैं। भौतिक आन्दोलनों में किसी के सामने इनसान का आर्थिक मसला होता है, कोई राजनीति पर कब्ज़ा करना चाहता है, कोई छूत-छात को असूल मसला समझे हुए है। कोई शिक्षा में उन्नति और उद्योग-धंधों में आगे बढ़ने को महत्व देता है, और इसी को अपना लक्ष्य बनाए हुए है। इसी प्रकार के एक या एक से अधिक मसले उनके सामने होते हैं। जो आन्दोलन आत्मा के सुधार के लिए उठते हैं वे इस भौतिक दुनिया ही से आँख बन्द कर लेने की ताकीद करते हैं, योगा के द्वारा नफ़्सकुशी का अभ्यास कराते हैं और एकान्तवास का रास्ता दिखाते हैं। लेकिन इस्लाम इनसान के किसी एक या कुछ मसलों से नहीं, बल्कि सभी मसलों से बहस करता है, उसके ज़ाहिर और बातिन दोनों को एक विशेष दिशा देता है। वह उसके हर पहलू को देखता और उसकी हर ज़रूरत को पूरा करने का तरीक़ा सिखाता है। इसी मक़सद को लेकर इस्लाम का दाई (आहवान-कर्ता) खड़ा होता है। कितना बड़ा काम है जो उसके पेशेनज़र है, कितनी बड़ी मुहिम है जिस पर उसे सफलता प्राप्त करनी है।

दावत की धारणा की बुनियाद

दावत की कल्पना की नींव यह है कि आदमी ने जिस चीज़ को हक़ समझकर क़बूल किया है उसे दूसरों के लिए भी हक़ समझे। जिस रास्ते को उसने सही समझकर अपनाया है उसी पर दूसरों को चलाने की कोशिश करे। वह अपने लिए जिस आस्था एवं कर्म, जिस अदब और अख़लाक़, जिस सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था और जिस

विधान एवं नियम को जाइज़ और सही समझता है उसी को दूसरों के लिए भी जाइज़ और सही बताए। इसलिए कि ख़ुदा से बग़ावत अगर उसके लिए सही नहीं है तो दूसरों के लिए भी सही नहीं है, बदी और नाफ़रमानी जिस तरह उसके लिए तबाहकुन हैं उसी तरह दूसरों के लिए भी तबाह करनेवाली हैं। परलोक से निश्चिन्त होकर जीवन बिताना जिस तरह उसके लिए अनुचित है उसी तरह दूसरों के लिए भी नामुनासिब है। वह इस साहस के साथ खड़ा हो जाए कि पूरी दुनिया उसकी तरह एक अल्लाह के सामने सिर झुका दे और कोई झूठा ख़ुदा उसका सिर न झुका सके।

यह बिल्कुल ग़ैर-फ़ितरी बात है कि आदमी ख़ुद तो सत्य को अपनाए और दूसरों का सत्य से वंचित रहना उसे बेचैन न करे। बातिल (झूठ) को बातिल न माने और दुनिया का उससे चिमटा रहना सहन कर ले। अल्लाह के दीन पर उसका ईमान हो और उसे ग़ालिब और सरबुलन्द करने की तड़प उसमें न पाई जाए। निस्सन्देह ऐसे इनसान भी दुनिया में होते हैं जो एक बात को ग़लत समझने के बावजूद उसे सहन करते रहते हैं और किसी लक्ष्य और उद्देश्य को सही मानने के बावजूद उन्हें इसकी चिन्ता नहीं होती कि माहौल भी उसके सही होने का क़ायल हो जाए और वह लोगों की ज़िन्दगियों में उतर जाए। गन्दगी का ढेर उनके सामने जमा होता रहता है लेकिन उनके साफ़-सफ़ाई का ज़ौक़ वह चुप-चाप सहन करता रहता है। उन्हें इसकी फ़िक्र नहीं होती कि यह ढेर हट जाए और इसकी जगह सुगन्धित फूलों की बहार आए। इस प्रकार के निष्क्रियता के शिकार और टस से मस न होने वाले लोगों के लिए आन्दोलनों के द्वार हमेशा बन्द रहते हैं। वे कभी उनमें आते भी हैं तो देर तक साथ नहीं दे पाते और बहुत जल्द अलग हो जाते हैं।

पैग़म्बरों का काम

दावत का काम हक़ीक़त में नबियोंवाला काम है। इसके लिए अल्लाह ने हर ज़माने में उन नेक और महात्मा इनसानों का चयन किया जिन्हें हम रसूल और पैग़म्बर कहते हैं। अल्लाह के उन नेक बन्दों ने– जिसका उससे विशेष सम्बन्ध था और जो उसके प्यारे थे, जिनसे वे मुहब्बत करते थे और जिनसे वह मुहब्बत करता था– दावत के इस काम में अपनी जानें खपा दीं, ताने सहे, गालियाँ सुनीं, सुख-चैन छोड़ा, सख़्त-से-सख़्त कठिनाइयाँ सहीं, घर से बेघर हुए और कभी फाँसी के फन्दे पर लटकाए गए। लेकिन इसके बावजूद अल्लाह ने उनके ज़रीए इस काम को जारी रखा। दुनिया में कौन अपने प्रिय जनों की तकलीफ़ गवारा करता है। अल्लाह चाहता तो अपने उन प्रिय बन्दों को दावत ही के काम से रोक देता या उनको इस रास्ते के तमाम कष्टों और तकलीफ़ों से सुरक्षित रखता। लेकिन उसने यही चाहा कि उसके ये नेक और मुख़लिस बन्दे ज़िन्दगी भर दावत का काम जारी रखें। पैग़म्बरों का इतिहास बताता है कि उनके मुख़लिस साथियों और उत्तराधिकारियों ने भी दावत की यही ख़तरों-भरी राह अपनाई और बेमिसाल क़ुरबानियाँ देते हुए उसपर चलते रहे। जब तक उनके शरीर में जान बाक़ी रही, न तो उनका यह सफ़र ख़त्म हुआ और न ही कभी वे इससे विमुख हुए।

ख़ुदा का अपने पैग़म्बरों और उनके उत्तराधिकारियों के बारे में यह फ़ैसला बताता है कि दावत के इस काम के लिए मानवजाति के बहुत श्रेष्ठ और महात्मा लोग भी तकलीफ़ें उठा सकते हैं। दुनिया की क़ीमती से क़ीमती जानें इसपर बलिदान हो सकती हैं, लेकिन इसे कभी छोड़ा नहीं जा सकता। सोचिए वह कितना बड़ा और महान काम था जिसके लिए ये पवित्र और पाकीज़ा ज़िन्दगियाँ इस तरह समर्पित हो गईं जैसे उनके लिए इसके सिवा और कोई काम ही न था।

यह है इस काम की महानता। इसी महान कार्य को आज आप अन्जाम देना चाहते हैं। इसमें आपका वह सब कुछ लुट जाए जो आप के पास है तो लुट जाने दीजिए, आपकी जीवन-पूँजी इसी में लग जाए तो लग जाने दीजिए, यह घाटे का सौदा नहीं है। यह वह तिजारत (व्यापार) है जिसपर कल आप गर्व करेंगे और आपके सम्मान और कामयाबी पर बहुत-से वे लोग भी रश्क करेंगे जो आपको नादान समझते हैं और जिनके निकट मौजूदा हालात में दीन की दावत का काम न करने के लिए कोई वैध कारण नहीं है।

लोगों पर गवाही

पैग़म्बरी के इस काम को 'लोगों पर गवाही' से भी ताबीर किया गया है। इसका मतलब यह है कि जिस क़ौम में अल्लाह के किसी पैग़म्बर का अवतरण होता है वह उसके मध्य अल्लाह के दीन का हक़ होना दलीलों (प्रमाणों) से इस प्रकार साबित करता है कि उसके इनकार के लिए कोई माक़ूल बुनियाद बाक़ी नहीं रहती। इसके बाद अल्लाह की तरफ़ से उसपर तर्क-वितर्क समाप्त हो जाता है और उसका फ़ैसला हो जाता है। अल्लाह के दीन के माननेवाले उसके इनाम और सम्मान के अधिकारी ठहरतें हैं और उसके विरोधियों पर उसका अज़ाब टूट पड़ता है। ख़ुदा का यह क़ानून क़ुरआन मजीद में इन शब्दों में बयान हुआ है—

> "हमने तुमसे पहले भी रसूल उनकी क़ौमों की तरफ़ भेजे। वे उनके पास खुली-खुली दलीलें लेकर आए। (इसके बाद) हमने उन लोगों से बदला लिया जिन्होंनें जुर्म (अन्याय) किया, (और ईमानवालों की मदद की) ईमानवालों की मदद करना हमारे लिए ज़रूरी था।" (क़ुरआन, 30:47)

क़ियामत के दिन भी पैग़म्बरों की क़ौमों का फ़ैसला इसी गवाही की बुनियाद पर होगा। क़ुरआन में है—

"उस वक़्त क्या हाल होगा जबकि हम हर उम्मत में से एक गवाह लाएँगे और आपको (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) उन लोगों पर गवाह बनाकर खड़ा करेंगे। उस दिन, जिन लोगों ने कुफ़्र (इनकार) किया और रसूल की नाफ़रमानी की, तमन्ना करेंगे कि काश ज़मीन फट जाए और उसमें समा जाएँ और अल्लाह से कोई बात छिपा न सकेंगे।"

(क़ुरआन, 4:41-42)

इन आयतों में क़ियामत (प्रलय) का वह मंज़र पेश किया गया है जबकि अल्लाह के रसूलों और उनकी उम्मतों (क़ौमों) को जमा कर के सवाल किया जाएगा। रसूलों से पूछा जाएगा कि उन्होंने लोगों पर गवाही का फ़र्ज़ किस हद तक अंजाम दिया? वे जवाब देंगे कि उन्होंने अल्लाह का दीन अपनी क़ौमों तक बिना किसी कमी-बेशी के पहुँचा दिया और तबलीग़ (प्रचार-प्रसार) और उपदेश का कर्तव्य पूरा कर दिया। यही सवाल ख़ुदा के अन्तिम रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से भी किया जाएगा। आप (सल्ल०) का जवाब भी यही होगा कि आपने ख़ुदा का दीन अपनी उम्मत तक पहुँचा दिया और उसके समझाने में कोई कसर न छोड़ी। जो व्यक्ति उसे समझना चाहता उसके दिल की एक-एक खटक दूर हो सकती थी। लेकिन इसके बावजूद जिन लोगों ने उसका विरोध किया वही अपने इस आचरण के ज़िम्मेदार हैं। आप (सल्ल०) की किसी कोताही का इसमें कोई दख़ल नहीं है। आप (सल्ल०) ने दावत का फ़र्ज़ पूरी तरह अदा कर दिया। उस वक़्त विरोधियों के पास कोई बहाना न होगा। उनके सारे ग़लत काम और बदकारियाँ सामने होंगी। कोई बात वे छिपा नहीं सकेंगे। उस वक़्त हसरत से कहेंगे कि काश हमने पैग़म्बरों की बात सुनी होती! उन्होंने दुनिया और आख़िरत की कामयाबी की राह दिखाई थी। लेकिन हमने अपनी ज़िद और हठधर्मी से अपनी आँखें मूँद ली। काश! ज़मीन फट जाती हम उसमें समा जाते और यह दिन देखना न पड़ता।

हदीसों में आता है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने एक बार हज़रत अब्दुल्लाह बिन-मसऊद (रज़ि॰) से क़ुरआन सुनाने की फ़रमाइश की। उन्होंने सूरा निसा की तिलावत की। जब इन आयतों (41 और 42) पर पहुँचे तो उन्होंने देखा कि आप (सल्ल॰) की आँखों से आँसू बह रहे हैं। (हदीस : बुख़ारी)

ये आँसू एक तरफ़ उस एहसास की वजह से थे कि आप (सल्ल॰) पर एक भारी ज़िम्मेदारी डाली गई है, दूसरी तरफ़ यह कल्पना करके भी आपका दिल काँप रहा था कि आपकी क़ौम इस दीन को रद्द कर दे तो कल उसका क्या हश्र होगा?

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के बाद लोगों पर गवाही की यह ज़िम्मेदारी आप की उम्मत पर डाली गई। क़ुरआन ने साफ़-साफ़ शब्दों में कहा है—

> "इस तरह हमने तुमको एक उम्मते वसत (उत्तम समुदाय) बनाया है ताकि तुम दुनिया के लोगों पर गवाह हो और रसूल तुमपर गवाह हो।" (क़ुरआन, 2:143)

इसका मतलब यह है कि क़ौमों की क़िस्मत इसी उम्मत से जुड़ी है। वह गवाही का फ़र्ज़ ठीक-ठीक अंजाम देकर उनकी हिदायत (मार्गदर्शन) का सामान जुटा कर सकती है। इससे वह अपनी ज़िम्मेदारी से आज़ाद होगी और ख़ुदा के यहाँ बेहिसाब अज्र और सवाब की अधिकारी ठहरेगी। लेकिन अगर वह इससे ग़फ़लत बरते तो दुनिया की गुमराही के लिए उससे पूछ-गछ होगी, और डर है कि बड़ी सख़्त पूछ-गछ होगी। लेकिन अफ़सोस कि उम्मत अपनी इस ज़िम्मेदारी को भूल चुकी है! शायद उसे इसका एहसास तक नहीं है। वरना दुनिया की हालत पर उसका दिल फट पड़ता और उसकी आँखें नम (सजल) हो जातीं।

दावत का मैदान

कुछ लोग हैरत के साथ पूँछते हैं कि दावत का क्या काम किया जाए और उसका मैदान क्या है? हालाँकि जो व्यक्ति ख़ुदा के दीन को लेकर उठे उसके लिए यह सवाल बिलकुल बेमाना है। उसके लिए तो हर तरफ़ काम ही काम है। उसे इनसानों को झूठे ख़ुदाओं की ग़ुलामी से निकालकर सिर्फ़ एक ख़ुदा की ग़ुलामी में दाख़िल करना है, उसे कुफ़्र और शिर्क से लड़ना है, बेदीनी और नास्तिकता का मुक़ाबला करना है। बद-अख़लाक़ी और बेशर्मी से जंग करनी है, उसे सही आस्थाओं और कर्मों की, उत्तम चरित्र की, तहज़ीब, सामाजिकता और सभ्यता एवं राजनीति में ख़ुदा की मरज़ी की पैरवी की दावत देनी है। वह भलाइयों को फैलाने और बुराइयों को मिटाने के लिए खड़ा हुआ है। जब तक इनकारियों में से एक भी इनकारी बाक़ी है और नेकियों में से एक नेकी भी क़ायम होने से बाक़ी रह गई है, उसका काम ख़त्म नहीं होता।

दुनिया में जो आन्दोलन उठते हैं और उनके जिन कार्यकर्त्ताओं को आप हर समय व्यस्त देखते हैं, वे क़ौमों और समुदायों के लिए और सीमित उद्देश्यों के लिए प्रयत्न करते हैं। कोई मज़दूरों के लिए काम करता है, किसी को पूँजीपतियों के कामों की फ़िक्र होती है, किसी का काम ऊँची जातिवालों में होता है और कोई नीची जातिवालों के लिए भाग-दौड़ करता है। किसी को अल्पसंख्यकों से लगाव होता है, किसी को बहुसंख्यकों से। किसी के पेशेनज़र एक क़ौम होती है और किसी के पेशेनज़र दूसरी क़ौम, कोई सामाजिक सुधार चाहता है, कोई शैक्षिक उन्नति का ख़ाहिशमन्द है, कोई आर्थिक क्रान्ति का नारा लगाता है और कोई राजनीतिक क्रान्ति का। इस तरह उनमें से हर एक छोटे-से दायरे में बन्द है। इस घेरे से बाहर उसके लिए कोई काम नहीं है और वह एक सीमित उद्देश्य को लिए बैठा है। इसके सिवा कोई दूसरा उसका उद्देश्य नहीं है। बड़ी हैरत है अगर वहाँ उन लोगों के लिए तो

मैदान हो जिनके सामने क़ौमों और समुदायों का सीमित लाभ है और उन लोगों के लिए मैदान न हो जिनके पास इस्लाम जैसी दौलत है जो सारे इनसानों के लिए है और जिससे हर एक व्यक्ति की दुनिया की कामयाबी और आख़िरत (परलोक) की नजात जुड़ी है।

दावत का हक़ किस तरह अदा होता है?

इस्लाम की दावत दुनिया का सबसे बड़ा और सबसे कठिन काम है। उसका हक़ इससे नहीं अदा होता कि किसी वक़्त स्टेज पर आकर भाषण दे दिया जाए या इस्लाम की ख़ूबियों और तारीफ़ों पर कोई किताब लिख दी जाए, या इस्लाम से सम्बन्धित किसी विषय पर वाद-विवाद में शामिल हो लिया जाए। यह काम जीवन-भर का प्रयत्न चाहता है। इसके लिए ज़रूरी है कि दावत के कार्यकर्ता के दिल और दिमाग़ पर हर समय दावत की कल्पना छाई रहे, उसकी बात-चीत का केन्द्र दावत हो, उसकी दिलचस्पियाँ उसी के गिर्द घूमती हों, उसके सम्बन्धों की बुनियाद यही हो। वह अपनी मुलाक़ात में, बात-चीत में, शिक्षा और शिक्षण में, कारोबार में हर वक़्त और हर हाल में उसी को पेशेनज़र रखे और सम्बोधितों तक बात पहुँचाने का कोई मौक़ा हाथ से न जाने दे। वह इसी की वजह से पहचाना जाए। उसकी हर साँस इसी में डूबी हुई हो, उसके अमल इसी के अधीन हों, उसे देखने वालों को साफ़ महसूस हो कि वह इसी दावत के लिए जी रहा है। उसकी तड़प दूसरों को तड़पा दे, उसकी फ़िक्र दूसरों को सोचने पर मजबूर कर दे, इसी की वजह से लोग उससे जुड़ें और कटें, इसी की ख़ातिर लोग उससे मुहब्बत करें और इसी की वजह से उससे दूरी महसूस करें।

दावत का यह नाज़ुक और कठिन काम दावत के कार्यकर्ता को इस प्रकार करना है कि न तो आम लोग उससे बेख़बर रहें और न ख़ास लोग। उसका वर्णन ग़रीबों की झोंपड़ियों में भी हो और अमीरों के महलों में भी। उससे समाज के ऊपर के लोग भी परिचित हो जाएँ और

नीचे के लोग भी। हर रंग, हर नस्ल, हर ज़बान और हर पेशे के लोगों तक इस्लाम अपनी सही सूरत में पहुँच जाए। बस्ती-बस्ती, शहर-शहर और गली-गली उसका पैग़ाम पहुँच जाए। स्कूलों, कालेजों, मदरसों, ख़ानक़ाहों, बाज़ारों, व्यापारिक केन्द्रों और छोटे-बड़े इदारों (संस्थाओं) में इस्लाम पर चर्चा होने लगे और पूरा देश उसकी आवाज़ से गूँज उठे। यहाँ तक कि उसके बारे में लोग भी और संगठन भी अपना एक आचरण निश्चित करने पर विवश हो जाएँ और उससे अनदेखी करना उनके लिए सम्भव न रहे।

ज़रूरी ख़ूबियाँ

हर काम के लिए उसके मुनासिब ख़ूबियों की ज़रूरत होती है। दीन की दावत का फ़र्ज़ भी वही व्यक्ति अंजाम दे सकता है जिसके अन्दर उसकी मुनासिबत से उच्च स्तर की ख़ूबियाँ पाई जाती हों। इसके बग़ैर एक तो वह उसका हक़ अदा नहीं कर सकता, दूसरे यह कि जो व्यक्ति इन ख़ूबियों से ख़ाली हो वह अपने अमल से दावत का ग़लत परिचय कराएगा और उसकी बदनामी का सबब होगा। दावत के लिए जो ख़ूबियाँ दरकार हैं, यहाँ उनमें से कुछ का वर्णन किया जा रहा है—

(1) अल्लाह से सम्बन्ध

क़ुरआन और हदीस से मालूम होता है कि अल्लाह के दीन की ख़िदमत सही मानी में वही आदमी करता और कर सकता है जिसका उससे गहरा सम्बन्ध हो। जो उसके लिए जीना और मरना, जुड़ना और कटना, देना और लेना जानता हो। जो उससे अत्यधिक प्रेम करे और उससे सबसे अधिक डरे, जो उसके रास्ते में तकलीफ़ उठा कर भी लज़्ज़त महसूस करे और जिसकी ज़बान सख़्त से सख़्त आज़माइशों में शिकवा-शिकायत से आलूदा न हो। जिसके दिल में उसकी महानता और हैबत इतनी बैठी हो कि उसके सिवा किसी दूसरे का भय उसमें जगह न पा सके। जो अपनी शक्तियों और क्षमताओं को, अपने सुख-चैन को, अपने माल-दौलत को, अपने ऐश व आराम को, अपने फ़ायदों और दिलचस्पियों को उसके लिए क़ुरबान करने के बावजूद यह समझे कि अभी हक़ अदा नहीं हुआ है। जिसे वह सब कुछ कर गुज़रने के बाद भी, जो उसके बस में है, अपनी ग़फ़लत और कोताही का एहसास सताए, जिसके लिए अल्लाह की हस्ती दुनिया की सब चीज़ों से ज़्यादा अज़ीज़ और प्यारी बन जाए। जिसकी हर मुहब्बत पर उसकी मुहब्बत ग़ालिब आ जाए, जिसे अल्लाह के दीन का नुक़सान

अपना व्यक्तिगत नुक़सान मालूम होता हो और जो दीन की तरक़्क़ी पर अपनी व्यक्तिगत तरक़्क़ी से ज़्यादा ख़ुशी महसूस करे। जो दीन पर होनेवाले हमलों को अपनी ज़ात पर होनेवाले हमले से ज़्यादा सख़्त समझे और दुनिया का हर नुक़सान सहन करके उसकी सुरक्षा में लग जाए। जिस व्यक्ति का अल्लाह से सम्बन्ध मज़बूत न हो उसके बस में नहीं है कि वह दीन का काम करे। किसी क्षणिक भावना के तहत वह उसे शुरू कर भी दे तो उसे जारी रखना, उस रास्ते की कठिनाइयों को सहन करना और उसके लिए क़ुरबानियाँ देना उसके लिए मुमकिन नहीं है।

(2) नमाज़ का महत्व

ख़ुदा से सम्बन्ध को पैदा करने और उसे मज़बूत से मज़बूत बनाने का ज़रीआ नमाज़ है। दावत के साथ नमाज़ का इतना गहरा ताल्लुक़ है कि दोनों को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। दावत के शुरू में भी नमाज़ का हुक्म है और उसके आख़िर में भी नमाज़ और तस्बीह की हिदायत है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को दावत के काम में लगाया गया तो साथ ही तहज्जुद (रात की ख़ास नमाज़) का हुक्म दिया गया। फ़रमाया गया कि दिन में तो तुम्हें बहुत अधिक व्यस्तता है इसलिए रात में ख़ुदा को याद करो। रात के अधिकांश क्षणों में, आधी रात या उससे कुछ कम या ज़्यादा हिस्से में नमाज़ पढ़ो। कहा गया—

> "ऐ चादर ओढ़नेवाले! खड़े हो रात को मगर थोड़ा-सा (आराम भी कर लो), रात का आधा या उससे थोड़ा-सा कम कर दो या उससे कुछ ज़्यादा कर दो। क़ुरआन को ठहर-ठहर कर और साफ़ पढ़ो। हम तुमपर एक भारी बात डालनेवाले हैं। बेशक रात का उठना नफ़्स को सख़्त रौंदता है और उसकी वजह से बात अच्छी तरह निकलती है। बेशक तुम्हारे लिए दिन में बड़ी व्यस्तता है। अपने रब के नाम का ज़िक्र करते रहो और सबसे

कटकर उसी के हो रहो। वह पूरब और पश्चिम का रब है। उसके सिवा कोई पूज्य नहीं है। उसी को अपना कारसाज़ बनाओ।" (क़ुरआन, 73:1-9)

जो व्यक्ति अल्लाह के दीन के लिए हर समय व्यस्त हो और जिसे दिन भर की दावत की भाग-दौड़ ने निढाल कर दिया हो उसे ज़ाहिर तौर पर रात में आराम का मशविरा देना चाहिए लेकिन यहाँ लम्बी नमाज़ का हुक्म दिया गया है। इसमें इस बात की तरफ़ इशारा है कि दिन में जो कठिन दावत का काम करना है उसके लिए ताक़त रात की नमाज़ ही से हासिल होगी। फिर जब तेईस वर्ष की कोशिश के बाद यह दावत कामयाब हुई, क़ुरैश की ताक़त टूट गई, मक्का फ़तह हुआ और अल्लाह का घर– 'काबतुल्लाह'– अल्लाह के बन्दों के संरक्षण में आ गया तो उस वक़्त भी अल्लाह के सामने सिर झुकाने और उसकी तस्बीह और तारीफ़ का हुक्म हुआ।

"जब अल्लाह की मदद और फ़त्ह आ जाए और तुम लोगों को देख लो कि वे फ़ौज-दर-फ़ौज अल्लाह के दीन में दाख़िल हो रहे हैं तो अपने रब की तारीफ़ के साथ उसकी तस्बीह करो और उससे क्षमा-याचना की दुआ माँगो, बेशक वह दुआ क़बूल करनेवाला है।" (क़ुरआन, 110:1-3)

नमाज़ शुरू से आख़िर तक दावत के साथ लगी हुई है। इसके बग़ैर उसका हक़ न अदा हुआ है और न क़ियामत तक अदा हो सकता है। जिस तरह हवा और पानी के बग़ैर कोई जान ज़िन्दा नहीं रह सकती उसी तरह नमाज़ के बग़ैर यह दावत न ज़िन्दा रह सकती है और न कामयाबी का मुँह देख सकती है।

नमाज़ से सब्र पैदा होता है

दावत के लिए दो ख़ूबियों की बड़ी अहमियत है। एक कठिनाइयों और परेशानियों में सब्र, दूसरे बातिल (झूठ) के मुक़ाबले में साबित-

क़दमी। ये दोनों ख़ूबियाँ नमाज़ ही से पैदा होती हैं। इस्लामी दावत का मक्की दौर सब्र और साबित-क़दमी का दौर था। उस ज़माने में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) जैसी बेनफ़्स, सुचरित्र, शरीफ़ और पवित्र हस्ती के रास्ते में काँटे बिछाए गए, पत्थर बरसाए गए। अल्लाह माफ़ करे, मजनूँ कहा गया, बेदीन कहा गया, क़िस्सा-कहानी कहनेवाला कहा गया, दूसरों का सिखाया-पढ़ाया या दोहरानेवाला कहा गया। इतिहास गवाह है कि आप (सल्ल॰) इन बे-बुनियाद इलज़ामों और तोहमतों पर कभी उत्तेजित नहीं हुए, बल्कि सब्र और सुकून के साथ अपनी दावत पेश फ़रमाते रहे। विरोध करनेवालों के ज़मीर को झिंझोड़ा, उनकी अक़्ल से अपील की, उन्हें चिन्तन-मनन पर उभारा और अन्धे-बहरे विरोध के बुरे नतीजों से आगाह किया, इस तरह बैर और दुश्मनी के उस माहौल में हुज्जत तामाम कर दी।

उसी पवित्र आचरण को सहाबा किराम (रज़ि॰) ने अपनाया और विरोधों की आँधी में सब्र का पहाड़ बने रहे। उनका जिहाद बे-मिसाल था तो सब्र भी बे-मिसाल था। फिर यह कि ये बुज़ादिलों और नामर्दों का सब्र नहीं था बल्कि जवाँमर्दों और मौत से खेल जानेवालों का सब्र था। यह उस क़ौम के सपूतों का सब्र था जिसके यहाँ बात-बात पर तलवारें म्यान से निकल जाती थीं, जिनके विरोध और ग़ुस्से की आग विरोधियों से बदला लिए बग़ैर बुझती न थी, जो अपने सहयोगियों और हामियों पर किसी को ज़ुल्म करने की इजाज़त नहीं देती थी। जिसका हर व्यक्ति चोट खान के बाद शेरों की तरह बिफर जाता था, जिसके निकट ज़ुल्म को सहन करना बुज़दिली था, जो जिहालत और पशुता का जवाब सख़्त-तर जिहालत और पशुता से देना ज़रूरी समझती थी। हैरत है उस क़ौम के लोगों, जिनमें से ज़्यादातर जवान थे, इस्लाम ने सब्रो-ज़ब्त का इस तरह पाबन्द बनाया कि मक्का के पूरे इतिहास में उनकी कोई मिसाल नहीं मिलती कि किसी तोहमत रखने पर ग़लत, बयानी पर वे बेक़ाबू हो गए हों, ज़ुल्मो-ज़्यादती के मुक़ाबले में बदले की

भावना उभर आई हो, बदज़बानी के जवाब में बदज़बानी और बदसुलूकी की हो। ख़ंजर के मुक़ाबले में ख़ंजर उठाया हो, तलवार के मुक़ाबले में तलवार निकल आई हो, सब्र की यह ग़ैर-मामूली ताक़त नमाज़ से पैदा होती है। एक जगह क़ुरआन में है–

> "जो कुछ ये कह रहे हैं उसपर सब्र करो और अपने पालनहार की तारीफ़ के साथ उसकी तस्बीह (गुणगान) करते रहो, सूरज निकलने से पहले भी और सूरज डूबने से पहले भी, और रात में भी उसकी तसबीह करो और सजदों को ख़त्म करने के बाद भी।" (क़ुरआन, 50:39-40)

सब्र (धैर्य) का महत्व

जो लोग दीन की दावत का काम करने खड़े हों उनके लिए धैर्य की आज भी उसी तरह ज़रूरत है जिस तरह कल ज़रूरत थी। इस वक़्त एक तरफ़ मज़हब-दुश्मन और बेदीन (अधर्मी) लोगों ने उनके ख़िलाफ़ जंग छेड़ रखी है और दूसरी तरफ़ अल्लाह और रसूल का नाम लेनेवाले उनसे बरसरे-पैकार हैं। मज़हब बेज़ार तबक़ा उन्हें क़दामत-परस्त, दक़ियानूसी, ज़माने से बेख़र, देश-दुश्मन, क़ौम-दुश्मन और फ़िरक़ापरस्त साबित करने की पूरी कोशिश कर रहा है। इसकी वजह यह नहीं है कि उन्होंने दीन के ख़ादिमों (सेवकों) को इसी तरह देखा है और उनकी कोशिशों को ऐसी ही पाया है, बल्कि इसकी हक़ीक़ी वजह यह है कि उनको अपने रास्ते की सबसे बड़ी रुकावट समझता है और उनकी आड़ में ख़ुदा के दीन, उसकी आस्थाओं और उसके जीवन-दर्शन को निशाना बना रहा है। जो लोग दीनदार (धर्मिक) समझे जाते हैं उनकी तरफ़ से भी उनपर झूठे इलज़ामों की बारिश हो रही है। कभी कहा जाता है कि इन लोगों का अक़ीदा ख़राब है। ये ख़ुदा को मानते हैं, उसके रसूल पर उनका ईमान नहीं है। कभी कहा जाता है कि ख़ुदा और रसूल को तो मानते हैं लेकिन उस तरह नहीं

मानते जिस तरह हम मानते हैं। कभी यह कहा जाता है कि उनका मज़हब सियासी मज़हब है। ये हुकूमत चाहते हैं, परहेज़गारी और खुदातरसी उनका मतलूब (वाँछित) और उद्देश्य नहीं है। कहीं से आवाज़ आती है कि ये सहाबा (रज़ि०) और उम्मत के बुज़ुर्गों की तौहीन करते हैं। कभी फ़रमाते हैं कि ये अपने अलावा किसी को मुसलमान नहीं समझते। कभी बताया जाता है कि उनके निकट सिवाय उनके किसी ने आज तक दीन ही को नहीं समझा है। आप जानते हैं यह सब कुछ सरासर झूठ है, तोहमत और ग़लतबयानी है। झूठ और तोहमत के इस तूफ़ान में सब्र और साबित-क़दमी की दौलत आपको नमाज़ ही से मिल सकती है।

नमाज़ से साबित-क़दमी आती है

किसी ग़ैर-इस्लामी माहौल में सही इस्लामी दावत का उठना और उसपर उसके कार्यकर्ताओं का साबित-क़दम रहना बड़ा ही कठिन काम है। जहाँ इस्लामी दृष्टिकोण पर ग़ैर-इस्लामी विचार और दृष्टिकोण हर तरफ़ से हमला कर रहे हों, जहाँ प्रतिकूल माहौल अपना प्रबल दबाव डाल रहा हो, जहाँ हतोत्साहित करनेवाली परिस्थितियों में दावत का काम करना पड़े, जहाँ किसी कार्यकर्ता की किसी ख़ूबी की अवमानना हो, अलबत्ता उसकी ग़लती और कमी की सराहना और तारीफ़ हो, जहाँ कमज़ोरी को हिक्मत और मसलहत कहा जाए, जहाँ पेशक़दमी की निन्दा की जाए और पीछे हटने पर प्रशंसा हो वहाँ साबित-क़दमी को कारनामा कहा जाए तो मुबालग़ा (अतिशयोक्ति) न होगा। जब कभी इस्लाम को विरोधी ताक़तें उभरता हुआ देखती हैं तो वे बलपूर्वक कुचल देना चाहती हैं, लेकिन यह उनके लिए आसान नहीं होता, क्योंकि आन्दोलन ज़ोर और ताक़त से दबाए नहीं जाते। इसलिए उनकी प्रबल इच्छा होती है कि उसके ध्वजावाहक खुद उसे ख़त्म कर दें। इसकी कभी वे खुली हुई दरख़ास्त नहीं करतीं। उनकी माँग केवल इतनी होती

है कि इस्लाम के माननेवाले अपने मज़बूत इरादे से कुछ पीछे हटें। वे दूसरों के विचारों और ख़यालों की सत्यता को स्वीकार करें और दूसरे उनके विचारों की ख़ूबी को मानें। कुछ बातों को वे सहन करें और कुछ को उनके विरोधी स्वीकार करें ताकि परस्पर एक-दूसरे के साथ रहने की कोई सूरत निकल आए। यह बड़ा नाज़ुक मरहला होता है। यही मौक़ा होता है जब कि इस्लाम के लिए काम करनेवालों के अन्दर भी लचक या सुस्ती आ सकती है और वे अपने विचारों पर नज़रसानी (पुनरावलोकन) के लिए तैयार हो सकते हैं। इस तरह का हर बढ़ता क़दम आन्दोलन की भी मौत है और उसके कार्यकर्ताओं की भी। इस लिए कि ऊँचाई से जब इनसान लुढ़कने लगता है तो बीच में रुकता नहीं हैं बल्कि नीचे पहुँचकर ही दम लेता है। जहाँ परिस्थितियों के सामने उसका सिर ज़रा-सा झुकता है तो परिस्थितियाँ उससे सजदा करा के छोड़ती हैं। जब वह एक चीज़ दुश्मन के हवाले करता है तो दुश्मन उसे हर चीज़ से वंचित कर के रख देता है।

झूठी शक्तियों के मुक़ाबले में साबित-क़दमी अल्लाह की याद और नमाज़ से मिलती है। देखिए क़ुरआन कितने खुले-खुले शब्दों में कहता है–

"और ऐ नबी! तुम और तुम्हारे वे साथी जो तुम्हारे साथ अल्लाह की तरफ़ पलट आए हैं, सही रास्ते पर इस तरह क़ायम रहो जैसा कि तुम्हें हुक्म दिया गया है और हद से न बढ़ो, बेशक जो कुछ तुम कर रहे हो उसे वह देख रहा है, और उन लोगों की तरफ़ ज़रा न झुको जिन्होंने ज़ुल्म का चलन अपना लिया है वरन् जहन्नम की लपेट में आ जाओगे। तुम्हारे लिए अल्लाह के सिवा कोई मददगार न होगा और कहीं से तुम्हारी मदद न होगी। और नमाज़ क़ायम करो दिन के दोनों सिरों पर और रात के कुछ भागों में, बेशक नेकियाँ बुराइयों को मिटा देती हैं। यह एक याददिहानी है उन लोगों के लिए जो अल्लाह को याद रखते हैं। बेशक अल्लाह नेकी करनेवालों का बदला कभी अकारथ नहीं करता।"

(क़ुरआन, 11:112-115)

साबित्-क़दमी के हुक्म के साथ ज़ालिमों और ख़ुदा के बाग़ियों की तरफ़ ज़र्रा बराबर झुकने से मना किया गया। इसके बाद रात और दिन के विभिन्न भागों में नमाज़ क़ायम करने की ताकीद की गई। इस तरह यह बता दिया गया कि नमाज़ ही के सहारे आदमी साबित-क़दमी दिखा सकता है। नमाज़ न हो तो उसके क़दम उखड़ जाएँगे, वह कमज़ोर पड़ जाएगा और ज़ालिम उसे अपनी ओर खींच कर ले जाएँगे।

(3) नैतिक जीवन-चरित्र

दीन के दाई (कार्यकर्ता) के लिए नैतिक जीवन-चरित्र का बड़ा महत्व है। इस्लाम इनसान के जीवन-चरित्र को उच्चता और पवित्रता प्रदान करता है। वह अगर सही माना में मन-बुद्धि में उतर जाए तो इनसान अनैतिक चरित्र में ग्रस्त नहीं हो सकता। इस्लाम ने अल्लाह की तरफ़ दावत देने के साथ यह दावा किया कि उसके माननेवाले विशेष गुणों से सुसज्जित होते हैं। इस दावे का सुबूत लोगों के जीवन थे जो अल्लाह पर ईमान रखते थे। एक गन्दे और जाहिलाना समाज में उनकी एक अलग पहचान थी। हर आदमी जिसके सिर में दो आँखें थीं उनकी अख़लाक़ी बरतरी को देख सकता था। किसी को यह कहने की हिम्मत नहीं हुई कि ईमान का दावा करनेवालों की ज़िन्दगियाँ फ़लाँ अख़लाक़ी ख़ूबी से ख़ाली है। कभी किसी तरफ़ से उनपर बद्‌द-अख़लाक़ी और बेहयाई का इलज़ाम न लगाया जा सका। क़ुरआन उनके जीवन-चरित्र का बेहतरीन तर्जुमान था और वे क़ुरआन के बयान के मुकम्मल प्रमाण थे।

दावत का हक़ उसी वक़्त अदा हो सकता है जबकि उसके साथ दीन के दाई का जीवन-चरित्र पूरी तरह समरूप हो जाए। नैतिक चरित्र में ग़ैर-मामूली ताक़त होती है। इनसान आम तौर से किसी भी आदमी के विचारों से उतना प्रभावित नहीं होता जितना उसके जीवन-चरित्र से होता है। सचरित्र व्यक्ति में बहुत आकर्षण होता है। अगर वह किसी फ़िक्र का हामिल हो तो उसकी फ़िक्र में भी आकर्षण पैदा हो जाता है।

बे-किरदार इनसान के विचारों और ख़यालों से दुनिया बहुत कम दिलचस्पी लेती है। सचरित्र व्यक्ति अपनी दावत का जीवित प्रमाण होता है। जिस व्यक्ति का जीवन नैतिक चरित्र से ख़ाली है वह अपनी दावत का खण्डन ख़ुद करता फिरता है। उसके खण्डन के लिए किसी दूसरी दलील की ज़रूरत नहीं पेश आती।

जो व्यक्ति दावत के मैदान में क़दम रखे उसे नैतिक जीवन-चरित्र की सबसे ऊँची चोटी पर खड़ा होना चाहिए। उसे जीवन की हर सुचरित्रता की बड़ाई का प्रमाण देना होगा, व्यापारी हो तो व्यापार में, उद्योग-धंधों में, मज़दूर हो तो अपने पेशे में, शिक्षक हो तो शिक्षण-प्रशिक्षण में, हर क़दम पर और हर जगह में उसे नैतिक चरित्र की बरतरी के चिन्ह स्थापित करने होंगे। उसके सम्बन्ध में जो भी व्यक्ति आए उसके जीवन-चरित्र को स्वीकार करने पर विवश हो जाए। उसके बीवी-बच्चे, नाते-रिश्तेदार और निकट सम्बन्धी, उसके पड़ोसी, उसके दोस्त-साथी, और हमपेशा साथी उसके नैतिक चरित्र की महानता से प्रभावित हों। जब लोग उसके सुचरित्र से प्रभावित होंगे तो उसकी दावत के लिए भी उनके दिल खुलेंगे।

आज दुनिया नैतिक चरित्र की मोहताज है

मौजूदा दौर का एक बड़ा अहम और संगीन मसला नैतिक चरित्र का पतन है। बहुत-सी नैतिक मान्यताएँ अपना मूल्य खो चुकीं है। इनसान की ख़ुदग़र्ज़ी इतनी ज़्यादा बढ़ गई है कि दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार और हमदर्दी एवं ग़मख़ारी की कल्पना ही कमज़ोर पड़ गई है। औलाद को माँ-बाप का प्यार नहीं मिल रहा है, बूढ़े माँ-बाप औलाद के अच्छे सुलूक से वंचित हैं, पड़ोसी, पड़ोसी के दुख-दर्द से बेख़बर है। इनसान को अपने निकटतम दोस्तों और अपनों के चरित्र पर भी भरोसा नहीं है। सतीत्व, पवित्रता सच्चाई, सत्यवादिता, दियानत, अमानत, क्षमा-भावना और धैर्य एवं सहजता जैसी ख़ूबियाँ मिटती चली जा रहीं हैं। मानव-जाति को सम्प्रदायों और संगठनों में बाँट दिया गया है। एक

क़ौम और दूसरी क़ौम के बीच अन्तर किया जाता है। अपनी क़ौम के साथ जो नैतिक चलन अपनाया जाता है दूसरी क़ौम को उसका अधिकारी नहीं समझा जाता। इन हालतों में अगर कहीं इस्लामी किरदार पूरी तरह प्रचलन में आ जाए तो बिना किसी शक और शुब्हे के दुनिया को अपनी ओर खींच लेगा। दुनिया अगर यह देखेगी कि इस्लाम के माननेवाले और दावत देनेवाले अपने नैतिक जीवन-चरित्र में बिल्कुल नुमायाँ हैं, उनके आचरण और चाल-चलन दूसरों से भिन्न हैं, वे मामलों के खरे और साफ़ हैं, परहेज़गार और ख़ुदातरस हैं, जब लोग ख़ुदग़र्ज़ी और मफ़ादपरस्ती के पीछे पड़े हुए हैं तो ये बेलौस और उपकार व बलिदान के सागर हैं, जब इस्मतें (सतीत्व) हर तरफ़ लुट रही हैं, तो ये सतीत्व इस्मत के रक्षक और निगहबान हैं, जब अमानत और दियानत का अभाव है तो उनकी दियानत और अमानत हर शंका से बालातर और उच्च है, जब रिश्तों के बग़ैर किसी की हाजत पूरी नहीं होती तो ये बग़ैर किसी बदले की कामना किए दूसरों की हाजतें पूरी करते हैं, जब भाई-भाई का दुश्मन है तो ये ग़ैरों और अपरिचितों को गले से लगाते हैं, जब दुनिया में किसी का हक़ सुरक्षित नहीं है और चारों तरफ़ अधिकारों की जंग चल रही है तो ये हर हक़दार का हक़ पहुँचाते हैं और उसे ख़ुद अदा करते हैं, तो ज़रूर सवाल पैदा होगा कि ये कौन लोग हैं और उनके नैतिक जीवन-चरित्र का स्रोत क्या है? फिर इस सवाल को नज़र-अंदाज़ करना इससे ज़्यादा मुश्किल होगा जितना कि सूरज निकलने के बाद प्रकाश का इनकार करना कठिन होता है। लेकिन इतना बड़ा सवाल उसी वक़्त पैदा हो सकता है जब कि दो-चार या दस-बीस लोगों में नहीं बल्कि एक पूरी जमाअत (सम्प्रदाय) में यह नैतिक चरित्र पैदा हो जाए और हर कोने में उसके प्रभावों को महसूस किया जाए। ख़ुदा वह दिन जल्द लाए जब कि हमारे जीवन उसी नैतिक चरित्र का प्रदर्शन कर सकें।

❖ ❖ ❖